वेद गीता और संस्कृत - साहित्य

सम्पूर्ण-संस्कृत-साहित्य के प्रेरणा-श्रोत रहे हैं - वेद ॥ भूमिका ॥

संसार के अपार साहित्य-सागर जहाँ अगणित साहित्यिक पुस्तकें विद्यमान हैं वहाँ यह बात शत-प्रति शत निश्चित रूप से कही-सुनी देखी व जानी जाती है कि गीता ही एक ऐसी पुस्तक है जिसके कोटि कोटि अनुवाद, कोटि कोटि भाष्य और कोटि कोटि संस्करण संसार की हर सभ्य और सुसंस्कृत भाषा में हो चुके हैं और यह बात भी सवा -सोलह-आने सच मानी जाती है कि जितने लोग पढ़ना, लिखना जानते हैं उन सबने गीता की भुरि-भुरि प्रशंसा की है। गीता के जोड़ की रचना इस सृष्टि में न तो पहले कभी हुई थी, न हो रही है, और न कदाचित आगे भी कभी हो, ऐसा मेरा अपना विश्वास है। गीता की यहाँ मैं कोई प्रशंसा नहीं कर रहा हूँ। यदि करूँ तो एक विशाल-ग्रंथ ही बन जायेगा। कहा भी गया है, न **''गीता सुगीता कर्त्तव्या कि मन्यैः शास्त्रविस्तरैः''**

अर्थात् - गीता का भली भांति अध्ययन कर लेने के बाद और शास्त्रों के विस्तार से लाभ ही क्या है ?

गीता सब शास्त्रों का सार है।

एक परमहंस ने तो यहाँ तक कह दिया है -

''हरि सम जग कुछ वस्तु नहिं, प्रेम पंथ सम पंथ।
सद्गुरू-सम सज्जन नहीं, गीता सम नहिं ग्रंथ॥''

स्वामी आनन्दगिरि जी का कहना है कि ''गीता का जो सकाम पाठ करते हैं, उनको तो मनो वांक्षित-फल प्राप्त होता है और जो निष्काम-पाठ करते हैं उनका अन्त:करण शुद्ध होकर परमानन्द की प्राप्ति होती है।'' गीता की प्रशंसा करने में भारत-पार के विदेशी विद्वान भी कम नहीं हैं। वारेन हेस्टिंग्स कहता था ''किसी भी जाति को उन्नत्ति के शिखर पर चढाने के लिये गीता का उपदेश अद्वितीय है।'' गीता पर सबसे सुन्दर, सारगर्भित और श्रेष्ठतम-टीका ज्ञानेश्वर जी की है। गीता के बारे में उनका कहना है कि ''गीता सब सुखों की नींव है, सिद्धान्त - रत्नों का भंडार अथवा नवरस-रूपी अमृत से भरा हुआ समुद्र है, खुला हुआ परम धाम और सब विद्याओं की मूल-भूमि है।'' ज्ञानेश्वर जी के बाद गीता का सबसे अच्छी टीका लोकमान्य बाल गंगाधर तिलकजी की है- ''गीता रहस्य''। वे लिखते हैं ''संक्षेप में किन्तु निस्सन्दिग्ध रीति से वर्तमान कालीन-हिन्दूधर्म के तत्वों को समझा देने वाला गीता की जोड़ का दूसरा ग्रंथ संस्कृत साहित्य में है ही नहीं।'' स्वामी विवेकानन्द भी कहा करते थे कि '' गीता उपनिषदों से चयन किये हुये आध्यात्मिक-सत्य के सुंदर-पुष्पों का गुच्छा है।'' मिस्टर ब्रुक्स का कथन है - "GITA IS INDIA'S CONTRIBUTION TO THE FUTURE RELIGION OF THE WORLD" भिक्षु अखण्डानन्द जी कहा करते थे कि ''गीता पाखण्डी-प्रपंचियों द्वारा फैलाये गये भ्रम जाल से छुड़ाकर सत्य के आकाश में विहार कराने वाला विमान है। डा. मैकेनिकल कहा करता था कि '' भारतवर्ष के धर्म में गीता, बुद्धि की प्रखरता, आचार की उत्कृष्टता एवँ धार्मिक-उत्साह का एक अपूर्व-मिश्रण है।'' मिस्टर विलियम वोन होम्बाई डिटि जो कि जर्मनी का सर्वश्रेष्ठ विद्वान हैं, कहते हैं कि "GITA IS THE MOST BEAUTIFUL, PERHAPES, THE ONLY TRUE PHILSOPHICAL SONG EXISTING IN ANY KNOWN TOUGUE" स्वयँ अरविन्द घोष ने कहा था कि इससे मनुष्यमात्र अपनी पूर्णता तथा सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मिक - उन्नत्ति को प्राप्त कर सकता है।'' भारतवर्ष के स्वातंत्र्य-संग्राम को महामंत्र ''वन्दे-मातरम'' देने वाले ऋषि तुल्य साहित्यकार बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय का मानना था कि ''ऐसा अपूर्व धर्म, ऐसा अपूर्व ऐक्य, केवल गीता में ही दृष्टिगोचर होता है, ऐसी अदभुत धर्म-व्याख्या किसी भी देश में और किसी भी काल में, किसी ने की हो, ऐसा जान नहीं पड़ता।'' ऐसे महान ग्रंथ के विषय में कुछ भी कहने से पहले मेरी स्थिति यह कहने की होने लगती है-

''संतो की अनिष्ट - उक्ति है मेरी वाणी।
समझूँ इसका भेद भला क्या मैं अज्ञानी ।।''

।। एक श्लोक का अर्थ ।।

इतनी ज्ञान-मंदिर गीता का भाष्य करना कोई सरल-कार्य नहीं है। गीता में भारतवर्ष के सभी प्रकार के दार्शनिक ज्ञान का समावेश है। पर मुझे गीता का जो एक श्लोक टीका करने के लिये रूचा है, वह श्लोक गीता के दसवें अध्याय अर्थात् विभूति-योग का ३४ वाँ श्लोक है, और इस ३४ वें श्लोक का भी उत्तरार्ध, जो इस प्रकार है -

''कीर्ति: श्री वाक्चनारी एवं स्मृतिर्मेधा धृति: क्षमा।''

अर्थात् - ''तिय वर्ग में मेधा क्षमा धृति कीर्ति सुधि श्री वाक्भी।''

इस श्लोक में भगवान श्री कृष्ण यह कहते हैं कि स्त्रियों में मैं इन सात-गुणों के रूप में निवास करता हूँ यानी स्त्रियों में मेरेपन की झलक इन सात गुणों में देखी जा सकती है। यह सात गुण हैं १) मेधा २) क्षमा ३) धृति ४) कीर्ति ५) सुधि ६) श्री, और ७) वाक्। आइये, अब इन गुणों की परख भी देखें कि नारी में इन गुणों की पहचान किस प्रकार की जाती है।

१) मेधा का अर्थ है, प्रतिभा। मेधावी होना बौद्धिकता का प्रथम सोपान है। इसके बिना नई नई बातों की परख होना मुश्किल है। इसे लोक व्यवहार में समझ-बुद्धि भी कहते हैं।

२) क्षमा का अर्थ है मन की वह भावना या वृत्ति जिससे एक स्त्री दूसरी स्त्री द्वारा पहुँचाया हुआ कष्ट चुपचाप सहन कर लेना और कष्ट पहुचाने वाले के प्रति मन में कोई विकार तक नहीं आने देना। किसी दोषी या अपराधी को बिना किसी प्रतिकार के छोड

देने का भाव है यह। भूल का अपराध होने पर अपनी भूल या अपराध स्वीकार करते हुये यह प्रार्थना करना कि हम अब फिर ऐसा काम नहीं करेंगे, इसबार हमें दयापूर्वक छोड़ दीजियेगा।

३) धृति का अर्थ है धारण करने की क्रिया या भाव। धारण करने का गुण या शक्ति, धारणा-शक्ति। चित्त या मन की अविचलता, दृढ़ता, स्थिरता, धीर होने की अवस्था का भाव।

४) कीर्ति का अर्थ है यश, प्रसिद्धि, शोहरत। पुण्य तथा किसी की वह ख्याति जो बहुत अच्छे और बड़े काम करने पर प्राप्त होती है। वह अच्छा और बड़ा काम जिससे किसी के बाद उसका नाम हो।

५) सुधि का अर्थ है स्मृति, स्मरण-शक्ति या बीती हुई बातों का वह ज्ञान जो स्मरण -शक्ति के द्वारा फिर से एकत्र या प्राप्त होता है। याद या अनुस्मरण या इसे धर्म, दर्शन, आधार व व्यवहार में भी देखा जा सकता है।

किसी पुरानी या भूली हुई बात का फिर से याद आ जाना, जो साहित्यशास्त्र में संचारी-भाव माना जाता है। प्रिय के सम्बन्ध में देखी या सुनी, हुई बातें रह रह कर याद आना जो पूर्व-राग की दस दशाओं में से एक है।

६) श्री का सीधा सादा अर्थ सौन्दर्य है, आकर्षण है, सिद्धी, धन-दौलत, सम्पत्ति, ऐश्वर्य, वैभव है। शोभा भी यही है। चमक चपलता और स्त्रियों के मस्तक पर पहनने की ''बिंदी'' नामक गहना है यह। सामुद्रिक 'ज्योतिष' के अनुसार पैर के तलुये में होने वाली एक प्रकार की शुभ-रेखा भी श्रीही है। यह एक प्रकार का आदर सूचक शब्द है जो आदरणीय पुरूषों के नाम से पहले लगाया जाता है। यह षाड़व जाति की एक रागिनी भी है, जो कि सूर्यास्त के समय गायी जाती है। इसी लिये विष्णु की पत्नी का नाम 'श्री' पड़ा है।

इसमें अधिकार, कमल, सफेद चंदन, लौंग, ऋद्धि नामक औषधि, धुपाद्रि के भाव भी सम्मिलित होते हैं।

७) वाक का अर्थ है सरस गति वाली सरस्वती। वाणी, वाक्य, शब्द, कथन, वाद, बोलने की इन्द्रिय तथा व्यक्ति में संगीत का निर्भर। साहित्य और कला इसी वाक के दो रूप हैं।

इस पद के साहित्यिक सौन्दर्य के लिये हमें यह तालिका देखनी चाहिये -

काव्य - सौन्दर्य :-	कला पक्ष	भाव पक्ष
	सौन्दर्यचित्रण	(भावार्थ)

(क्रमशः)

- श्री रसिक बिहारी मंजुल
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-११०००७

वेद गीता और संस्कृत साहित्य

(गतांक से आगे)

।। राधा का रूप ।।

मैं गहराई में नहीं जाता। यदि गहराई में जाऊँगा तो मुझे १) जीवन-दर्शन २) विविध साहित्य ३) आर्चायत्व एवँ व्यक्तित्व का चित्रण ४) श्रृग्डाँरिकता ५) अलंकारिकता ६) भाषा ७) काव्य -रूप ८) नारी के प्रति दृष्टिकोण ९) छंद १०) रस ११) पाण्डित्य-प्रदर्शन १२) लोक संग्रह की भावना तथा १३) प्रकृति-चित्रण के विविध आयामों में ताकना-झाँकना पड़ेगा। सीधी सी बात है - जब भगवान श्री कृष्ण अपने प्रिय मित्र अर्जुन को अपनी विभूतियों का दर्शन दिग्दर्शन कराते हैं तो कहते हैं मैं आदित्यों में विष्णू हुँ, ज्योतियों में सूर्य हूँ, नछत्रों में चन्द्रमा हूँ, वेदों में सामवेद हूँ, देवताओं में इन्द्र हूँ, रूद्रों में शिव हूँ, यक्षों में कुबेर हूँ आदि आदि; अर्थात् समूहों -में एक, यानी व्यक्तिवाची सँज्ञा जैसे विष्णु, शिव सूर्य, चन्द्र, सामवेद इन्द्र तथा कुबेर। लेकिन जब स्त्रियों की बात आई तो भी उन्हें किसी एक स्त्री का नाम लेना था, चाहे वह स्त्री त्रिदेवियों में से एक होती या कोई मानवी होती पर यहाँ भगवान श्री कृष्ण ने अपनी छलिया-प्रवृत्ति का परिचय दिया और किसी विशेष स्त्री का नाम लेना उचित न समझा, घुमा-फिरा कर यह कह दिया कि जिस एक स्त्री में **''कीर्ति: श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृति: क्षमा''** गुण हो, वही स्त्री मैं हूँ और ऐसी स्त्री थी, उनके जीवन की प्रथम प्रेमिका 'राधा' जो सायण वैश्य की पत्नी तथा उनकी मामी थी, उम्र में भी उनसे कुछ बड़ी ही थी। इस राधा में स्त्रियों के सभी गुण थे (जो गुण उनके प्रेमी कृष्ण ने गिनाये हैं) पर जो गुण मूल हिन्दू-शास्त्रों के अनुसार स्त्री का परमधर्म है अर्थात् 'पतिव्रत- धर्म' जिसका वर्णन हर हिन्दू -शास्त्र में खुलकर किया गया है, राधा में गुण नहीं था। कुछ गौर किया जाय तो पता चलता है कि यह गुण उन सभी स्त्रियों में नही था जो येन-केन-प्रकारेण भगवान श्रीकृष्ण के परिवेश में आती हैं जैसे उनकी पत्नी (केवल एक ही पत्नी, जिसे उन्होंने वैदिकरीति से वरा था- रूक्मिणी) में भी न था, वह शिशुपाल की मंगेतर तथा श्री कृष्ण की प्रेमिका थी। उनकी बुआ - कुंती में भी न था, क्योंकि विवाह पूर्व उसका पुत्र कर्ण पैदा हो चुका था, यहाँ तक कि उनकी बहन द्रोपदी में भी नहीं था, कारण कि वह एक नहीं, पाँच पाँच सगे -भाइयों की पत्नी थी, यहाँ तक कि उनकी सगी बहन सुभद्रा में भी न था, कारण कि वह विवाह-पूर्व ही अर्जुन से प्रेम करती थी। उसे तो कृष्ण ने अर्जुन के साथ भगा

दिया था। ऐसी स्थिति में श्री कृष्ण 'पतिव्रत-धर्म' की दुहाई भला क्यों देते? वे तो अपने आदि स्वरूप विष्णुरूप में भी पराई- स्त्रियों के साथ छल करते रहे हैं। 'वृन्दा' नामक पतिव्रता का पतिधर्म भ्रष्ट उन्होंने ही किया था जिसे उन्होने तुलसी का पौछा बनाकर बाद में अपनी पत्नी बना लिया था। साक्ष्य तो यहाँ तक है कि लक्ष्मी को पाने के लिये विष्णु ने सरस्वती को त्याग दिया था, बाद में सरस्वती को ब्रह्मा ने अपनी पुत्री रूप में लेकर उससे मैथुन करके अपनी पत्नी बना लिया था। ऐसी परिस्थितीयों में , पड़े भगवान श्री कृष्ण पतिव्रतधर्म को जड़ से ही उखाड़ फैंकते हैं। उनके रूप इन्द्र स्वयँ गौतम-पत्नी अहिल्या के साथ जार-कर्म करते हैं। भगवान श्री कृष्ण ने अपने प्रिय सखा अर्जुन से भला १२० वर्ष का मेधावी लोकनायक युद्ध के मैदान में अपनी प्रेमिका का नाम लेते अच्छा लगता है ? कृष्ण लोक नायक थे, हर रूप में परम-आदरणीय थे। विष्णु के अवतार रूप में वे १६ कलाओं के सबसे बड़े अवतार ''कृष्णस्थु भगवान स्वयँ'' थे, मनुष्य रूप में भी वह परमपूज्य व्यक्ति थे। कृष्ण हर रूप में पूज्य रहे हैं। ऐसा परम-पूज्य-व्यक्ति समाज में खुले-आम भला अपनी उसे प्रेमिका का नाम कैसे ले सकता है, जिसका कि पति कोई और हो, वह उससे अर्थात अपने प्रमी से आजीवन छिप छिपकर मिलती हो। ..... लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि 'मीरा' राधा का ही अवतरित-रूप था, जो अपने पति 'राणा' को त्यागकर कृष्ण को अपना पति मानती थी और तर्क दती थी कि और स्त्रियाँ अपने पति को अपना भगवान कहती हैं, यदि मैंने भगवान को अपना पति कह दिया तो क्या गजब हो गया। ..... वैसे तो हर जीवात्मा स्त्री हैं, केवल परमपुरूष परमात्मा ही एक पुरूष हैं, जैसा कि आम हिन्दू धर्म ग्रंथ कहता आया है, पर गीता ऐसा नहीं कहती। गीता

जीवात्मा को परमपुरूष का अंश मानती है
अर्थात् -''**अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थित:** ''
यानी :- **''मैं सर्व जीवों के हृदय में अन्तरामत्मा पार्थ हूँ।''**

यौं पुरूष का अंश भी पुरूष ही हुआ, इसप्रकार कबीर जैसे संत का अपने को 'राम की बहुरिया,' कहने का कोई अर्थ नहीं रहा।

प्रश्न उठता है कि भगवान श्री कृष्ण ने अपने को स्त्रियों में किसी एक स्त्री का नाम लेकर क्यों नहीं दर्शाया ? कह देते - मैं 'स्त्रियों में राधा हूँ' पर उन्होंने ऐसा नहीं कहा। क्योंकि सायणवैश्य जो कि राधा का पति था, देवकी (अर्थात कृष्ण की माँ) का सगा भाई था, वह भगवान श्री कृष्ण को आडे-हाथों ले सकता था। ऐसी स्थिति में कृष्ण का विष्णुत्व खतरे में पड़ जाता। और यह बात उन्हें किसी भी कीमत पर स्वीकार नहीं थी। कृष्ण प्रेम को आजीवन गुप्त रखने में विश्वास रखते थे ।

हो सकता है; यह छल वेद व्यास ने किया हो, जो कि मूल रूप से गीताकार हैं। यदि ऐसा है तो यही कहकर सन्तोष करना पड़ेगा कि गीता का प्रवचन करते समय या तो वेदव्यास की जिन्हा पर भगवान श्री कृष्ण विराजमान थे अथवा भगवान श्री कृष्ण के वचनों पर वेदव्यास की लोविढी अपना काम कर रही थी। तत्वत: दोनो एक ही थे। कृष्ण तो थेही सोलह कला के अवतार, वेदव्यास भी विष्णु के २४ अवतारों में से एक थे। दोनों एक थे - फिर उनकी मिली भगत जो थी।

एक सम्भाँवना यह भी हो सकती है कि राधा का नाम कृष्ण किसी विशेष -विभूति के रूप में न लेना चाहते हैं, क्योंकि राधा उनकी व्यक्तिगत -प्रेयसी थीं, और गीता में तो उन्होंने अपनी केवल विशेष-विशेष-विभूतियों को ही कहा है -

गीता खुद ऐलान करती है -

''हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतय: ।
प्राधान्यत: कुरूश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे ।।''

अर्थात्- **कौन्तेय। दिव्य- विभूतियाँ मेरी अनन्त अशेष हैं।**
अब मैं बताऊँगा तुझे जो जो विभूति विशेष हैं ।।

हो सकता है, राधा विशेष न हो। पर यह बात गले नहीं उतरती। राधा तो कृष्ण की प्राण-शक्ति थीं, आहलादिका-शक्ति थीं, उन्हें 'विशेष' कैसे न माना जाय ? जिस रूक्मिणी का कृष्णने हरण किया था, और जिसे वह लक्ष्मी का रूप कहते थे, राधा के समक्ष वह उसे भी तिरस्कृत करते रहे हैं। फिर भला 'राधा' का नाम गीता के 'विभूति योग' में क्यों नही आया, यह बात मेरी समझ में आज तक नहीं आई है।

राधा का नाम न तो महाभारत में है न पुराणों के पुराण श्रीमद्भागवत महापुराण में ही है। फिर जब इन दो महान धर्मग्रन्थों में राधा का नाम तक नहीं है तो फिर 'गीता' में ही 'राधा' का नाम क्यो होगा जो गीता महाभारत का ही एक अध्याय-मात्र है ? लगता है राधा भगवान श्रीकृष्ण का व्यक्तिगत मामला है, जिसमें हस्तक्षेप करने का अधिकार किसी को नहीं है, वेद व्यास को भी नहीं है, और जब यह अधिकार अधिकारी-लेखक तक को नहीं है, तो फिर यह विशेषाधिकार किसे हो सकता है ? वेद व्यास तो उनके एक समकालीन-लेखक थे । बकिंमचन्द्र ने उसकी जीवनी ''श्रीकृष्णचरित'' नाम से लिखी है, राधा का उल्लेख न करने का संकेत स्वयँ श्रीकृष्ण का ही है, बिना कृष्णकृपा के राधा का वर्णन असम्भव जो है। स्वयँ शिव कहते हैं :-

''उमा जोग जप दान तप, नाना व्रत मख नेम।
राम कृपा नहिं करहिं तस, जस निष्केवल प्रेम ।।''

(क्रमश:)

- रसिक बिहारी मंजुल
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली -११०००७

वेद गीता और संस्कृत - साहित्य

सम्पूर्ण-संस्कृत-साहित्य के प्रेरणा-श्रोत रहे हैं - वेद

(गतांक से आगे)

।। आखिर यह राधा है कौन ? ।।

कभी कभी मैं यह सोचने पर विवश हो जता हूँ कि आखिर यह राधा आखिर है कौन ? यह भगवान श्री कृष्ण की कौन सी सखी-सहेली है और इसने कृष्ण से इतना खुलकर प्रेम कैसे कर लिया ? अंत में, सोचते सोचते मैं वेदों की शरण में गया जो सम्पूर्ण-संस्कृत-साहित्य के आदि प्रेरणा-स्त्रोत रहे हैं । इस प्रकार ५ मंत्र ऋग्वेद और १ मंत्र अथर्ववेद में मुझे मिला, जिसमें राधा का नाम आता है । यह मंत्र इस प्रकार है -

१- स्तोत्रं राधानां पते । ऋ. १/३०/५

२- गवामप ब्रजं वृधि । ऋ. १/१०/८

३- दासपत्नी रहि गोपा अतिष्ठन् । ऋ.१/३२/११

४- तमेतदधारयः कृष्णासु रोहिणीषु । ऋ. ८/९३/१३

५. कृष्णा रुपाणि अर्जुना वि वो मदे । ऋ. १०/२१/३

६- त्वं नृचक्षा वृषभानु पूर्वीः
कृष्णास्वग्ने अरुषो विभाहि । ऋथ. ३/१५/३

अब आप देखिये; राधा, गौ, ब्रज, गोप, वृषभानु, रोहिणी, कृष्ण और अर्जुन - आ गये न् ; भगवान श्री कृष्ण की प्रेम-जीवन के सभी उपकरण ! इन्हीं ८ तत्वों के आधार पर महाकवि वेदव्यास ने भागवत की रचना की थी, पर ये तत्व हैं आकाशीय-पदार्थ ।

।। राधा के लिये वेदों का अर्थ ।।

ऋग्वेद ६/९/१ में साफ साफ कहा गया है कि **''अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च''** अर्थात् अर्जुन और कृष्ण दोनो ही दिन के नाम हैं, इसी प्रकार राधा धन और अन्न को कहते हैं । गौ किरणें हैं और ब्रज-किरणो का धाम है 'द्यौ'। यही मंत्र गीता के विभूतियोग अध्याय का मूलाधार है जहाँ भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि मैं वृक्षों में पीपल हूँ । सारे का सारा विभूति-योग अध्याय, जो कि गीता का प्राण है, वेदों की कृपा का प्रतिफल है । प्रतीक और मानवीयकरण हिन्दूधर्म संस्कृति, साहित्य और आध्यात्म के प्राणबिन्दु रहे हैं । महान से महान साहित्यकार प्रतीक और मानवीयकरण की सहायता से उस विशाल साहित्य का सृजन करते हैं, जिसे सारा संसार पूजता है ।

।। वेद सत्यसाहित्य की कुंजी हैं ।।

वेद सत्यसाहित्य की वह कुंजी हैं जो विश्व साहित्य का

निर्माण करते हैं । देखिये, ऋग्वेद का यह मंत्र -

''अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहं कक्षी वाँ ऋषिरस्मि विप्रः ।
अहं कुत्समार्जुनेयं न्यृज्रेऽ हं कविरुशना पश्यता मा ।। ''

ऋग्वेद ४/१६/१

अर्थात् - हम मनु, सूर्य, कक्षीवान, उशना यह सब पदार्थ ही तो हैं । शुक्र की टेड़ी चाल भी हम ही हैं । यहाँ गीता का यह वाक्य भी कि - '' कवियों में उशना कवि मैं हूँ '' - स्पष्ट हो जाता है । यह उशना कोई आदमी नहीं है - उशना नाम शुक्र का है । इसकी चाल टेडी मेढ़ी बाँकी जो है - वेदों में नछत्रों की इसी चाल को काव्य कहते हैं ।

एक बात और- **'' पश्य देवस्य काव्यं ''** यह वाक्य नक्षत्र काव्य के लिये कहा गया है । इसलिये जो प्रकाश कृष्ण और अर्जुन है, वही उशना काव्य भी है ।

महाभारत के आदि पर्व (४/९९) में लिखा है कि **'' उशनस्य दुहिता देवयानी ''** अर्थात् देवयानी उशना की पुत्री है । अब तो इस बात में कोई शक नहीं रहा कि उशना शुक्र ही है। ----यौं भागवत की ब्रज-लीलायें और गीता की विभूतियाँ सूर्य, किरण, वर्षा, अन्न, गृहपति और विद्युत आदि ही हैं । महाकवि ने इन्हीं वैदिक शब्द - साम्य की सहायता से अनन्तान्त कथायें गढकर १८ पुराण, महाभारत व गीता जैसे दिव्यग्रंथ रच दिये हैं ।

सच बात तो यह है कि महापुरुष अपना संयम रखकर माया से अपने आकार बना बनाकर जगत-कल्याण के महाकार्य में तत्पर रहते हैं और तरह तरह की लीलायें दिखाकर पुनः अपने दिव्य रुप में आकर स्थित हो जाते हैं । यही कृष्ण की राधा विषयक प्रणय-लीला की रहस्यात्मकता का पटाक्षेप है । साहित्य इसी

प्रकार बनाता है जो संसार को सत्यमार्ग दिखाकर अपने वेद-रुप में निष्पाप, निष्कलंक तथा निष्काम रुप में सदा-सर्वदा सत्य बना रहता है। यही सत्सहित्य का श्रेय और प्रेय है। पतित से पतित पुरुष भी भगवान श्रीकृष्ण में कोई चरित्रिक-पतन नहीं देख सकता। वे तो हर रुप में प्रणम्य हैं।

वेद में कृष्ण और अर्जुन एक ही जगह आते हैं पर दूसरी जगह **'' अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च ''** (ऋ. ६/९/१) कहकर वेद में ही बतला दिया गया है कि दोनो का ही अर्थ दिन है। यहाँ श्लोक में दोनो पुरुषों की अटूट मित्रता से ही कृष्ण और अर्जुन नाम रख दिये गये हैं।

जबतक वेद हमारे साहित्यकारों के लिये प्रेरणा के पुंज बने रहेंगे तबतक भारतवर्ष का साहित्य दिव्य से दिव्य ग्रंथो की रचना करता रहेगा।

जबतक पुराणों और महाकाव्यों को आपलोग वेदों से अलग- थलग रख कर पढेंगे तबतक आप न तो हिन्दूधर्म को ही समझ सकेंगे न हिन्दू आध्यात्म को ही जान पायेंगे क्योंकि सारा वैदिक-साहित्य वेदों से ही शब्द ले लेकर रचा गया है। सच बात तो यह है कि हमारे लिये वेद हिन्दुत्व के प्रथम और अंतिम अर्थ हैं। वेदों के बिना वैदिक-साहित्य को समझना बेकार है।

।। विभूति योग की तीन व्याख्यायें ।।

गीता के दसवें अध्याय '' विभूति-योग'' की अबतक मैंने अनेकानेक टीकायें पढी हैं और सभी टीकायें मुझे सन्तोषजनक लगी हैं। कारण कि उनमें गीताकार के ही भाव की अभिव्यँजना हुई है। इस अध्याय को समझ लेने पर प्रत्येक भक्त भगवान के सामीप्य-सुख का लाभ उठा सकता है जैसे 'छन्दो में मैं गायित्री छंद हूँ'। संस्कृत-साहित्य में काव्य के लिये शास्त्र द्वारा निर्धारित विधान है। आधुनिक कविता की तरह देवभाषा (= संस्कृत) में लय और ताल की रचना मनमाने ढँग से नहीं की जाती। शास्त्रीय-छन्दों में ''गायत्री'' भी इस मंत्र का उल्लेख है। इसका विशेष -प्रयोजन भगवान के स्वरुप का साक्षात्कार है, इसीलिये यह भी भगवान का स्वरुप है। यह मंत्र उत्तम साधकों के लिये है और इसकी जपसिद्धि से विशुद्ध- सत्व में स्थिति हो जाती है इसलिये इस मंत्र का उपयोग जप करने के लिये सत्वगुण में स्थित होकर उपयुक्त सद्गुणों से युक्त हो जाना है। वैसे भी वैदिक-संस्कृति में गायत्री मंत्र की बड़ी महिमा है। इसे ब्रह्मका नाद-अवतार माना जाता है। ब्रह्मा इसके गुरु हैं और उन्हीं की शिष्य-परम्परा में यह प्राप्त होता है।

यह गीता के एक श्लोक के अर्धांश का ब्रह्मवाचक अर्थ है। यदि हम भगवान श्रीकृष्ण को केवल मनुष्य ही मानें तो भी उनके ऐसे दिव्य-प्रवचन के कारण हम उनकी पूजा कर सकते हैं; पर कोई कोई मूर्ख तो यह भी कह देता है कि श्रीकृष्ण '' विभूतियोग'' में यह कहते हैं कि ''गिनीज़ बुक्स आफ वर्ड्स-रिकार्ड '' में स्थान पाने वाली प्रत्येक वस्तु को श्रीकृष्ण अपना ही रुप बता रहे हैं और मूलरुप से यही कहना चाहते हैं कि जो जो पदार्थ '' गिनीज़ बुक्स आफ वर्ड्स रिकार्ड'' में स्थान पा गये हैं उन उन पदार्थों में मैं ही हूँ। ..... ऐसे व्याख्याकारों को मैं जानता हूँ, उनमें से एक तो मेरे मित्र एड़वोकेट बंसल भी हैं - श्री उत्तम कुमार बंसल। काश; उन्होने भगवान श्रीकृष्ण के दिव्य चरित्र को वेदों के परिप्रेक्ष्य में कभी देखने का सत्प्रयास किया होता।..... गीता पढना और उसके तात्पर्यों को पकड़ पाना कोई खाला जी का घर नहीं है, कबीर कह गये हैं -

''कबिरा यह घर प्रेम का खाला का घर नाहिं।
सीस काट के मुँहि धरै, तब पैंठे घर माहिं।।''

रसिक बिहारी मंजुल
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली- ११०००७